International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 6; November 2018; Page No. 31-32

दलित विमर्श : एक अध्ययन

Dr. Zelam Chandrakant Zende
Assistant Professor, Department of Hindi, Veer Wajekar ASC College, University of Mumbai, Phunde, Uran, Raigad Maharashtra, India

सारांश
दलित साहित्य आज ऐक ऐसा ज्वलंत विमर्श बन गया है जिस पर हर कोई कुछ न कुछ लिखना या बोलना चाहता है। सदियो से दबाये, कुचले और शोषित किये गये दलितों को किस–किस तरह से प्रताड़ित किया गया, इस पर टिप्पणी करना या लिखना इतना आसान नहीं है। इस शोध–पत्रा में कुछ ऐसे बिन्दुओं को रेखांकित किया गया है जो अनछुए हैं।

मूल शब्द : दलित, कुचले, शोषित।

प्रस्तावना

'दलित' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'दल' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है तोड़ना, कुचलना इत्यादि[1] मानक हिन्दी कोश के अनुसार–समाज का वह निम्नतम वर्ग जो उच्च वर्ग के लोगों द्वारा उत्पीड़न के कारण आर्थिक दृष्टि से बहुत ही दीन–हीन अवस्था में हो, जिनका दलन हो, जो कुचला, दला, मसा, या रौंदा गया हो। जो दबाया गया हो, हीन अवस्था में पड़ा हुआ हो, ध्वस्त या नष्ट किया हुआ आदि।[2] हिन्दी विश्व कोश के अनुसार– ''दलमस्य जातं दल तारकादि–वादित च्।[3] समाज का निम्नतम वर्ग दलित होता है, जिसको विशिष्ट संज्ञा आर्थिक व्यवस्थाओं के अनुरूप ही प्राप्त होती है, जैसे– दास प्रथा में दास, सामंतवादी व्यवस्था में किसान, पूँजीवादी व्यवस्था में मजदूर समाज का दलित वर्ग कहलाता है।[4] भारतीय अधिनियम 1935 के अनुसार 'हरिजन एक्ट' के आधार पर कुछ जातियों को अनुसूचित किया गया है। पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट के अनुसार इन्हें अनुसूचित जाति, जन–जाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग कहा गया। साधारण (ग्रामीण) बोल–चाल की भाषा में अनुसूचित, अनुसूचित जनजाति, हरिजन आदि जातियों को शूद्र कहा जाता है। 'हरिजन एक्ट' के अनुसार इन्हें 'हरिजन' कहा गया, डॉ. अम्बेडकर के अनुसार इन्हे दलित कहा गया। ज्योतिराव गोविन्दराव फुले के अनुसार इन्हें दलित कहा गया। मार्क्स के अनुसार इन्हें सर्वहारा कहा गया। दलित सदा से उच्च एवं मध्यम वर्ग के दो पाटों के बीच में पिसता आया है और पूँजीवादी साम्राज्यवाद की चक्की में पिसा जा रहा है।

दलित चिंतक का मत है कि दलितों का दलितों के द्वारा रचा गया साहित्य ही दलित साहित्य है। गैर दलित साहित्यकार सहानुभूति के साहित्य की रचना तो कर सकते हैं, स्वानुभूति की नहीं। इस दृष्टि से सहानुभूति के साहित्य को दलित साहित्य नहीं कह सकते। दलित लेखकों में अनेक आई.ए.एस., आई.पी.एस. आदि हैं, जिनमें डॉ. धर्मवीर (आई.ए.एस.) प्रमुख हैं। धर्मवीर ने कबीरदास पर कई पुस्तकों की रचना की है। इनकी इन सभी पुस्तकों का निष्कर्ष यही है कि कबीरदास को उनके अलावा अन्य कोई नहीं समझता है। इनकी समझ से कबीरदास के सभी व्याख्याकार ब्राह्मणवादी दलित विरोधी हैं। लेखक प्रेमचन्द (सद्गति, पूस की रात, ठाकुर का कुंआ, सवा सेर गेंहू), उपेन्द्रनाथ अश्क (कालू भंगी), कमलेश्वर (राजा निरवंशिया), फणीश्वरनाथ रेणु (मैला आँचल) आदि को दलित लेखक नहीं मानते हैं। इनका मानना है कि जिन्होंने मैला को अपने सिर पर नहीं ढ़ोया है, सवर्णो के प्रत्यक्ष पीड़न और अपमान की मार जिसने नहीं सही, वह व्यक्ति दलित लेखन करने का अधिकारी कैसे हो सकता हैं।[5] लेकिन बड़े दुर्भाग्य की बात है कि जो दलितों के पक्षधर हैं, खुद दलित बनते हैं। मेरी दृष्टि में एक नहीं हजार लोग ऐसे हैं, जिन्हें दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं हैं, रहने को मकान नहीं है, पहनने को कपड़े नहीं है। फिर कोरी वकालत करने से क्या लाभ है? धर्मवीर जो दलित हितैषी बनते हैं। उन पर दलित महिलाओं ने ही चप्पलें फेंकी।

दलित लेखक बंधुओं का यह मानना कि दलित साहित्य का सृजन दलित लेखक ही कर सकता है, यह उचित नहीं है। गैर दलित साहित्यकार भी दलित साहित्य का सृजन कर सकते हैं। गैर दलित साहित्यकारों ने भी दलित साहित्य का सृजन किया है, जिनमें गोस्वामी तुलसीदास, कबीरदास, नरेश मेहता, प्रेमचन्द, निराला, कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह, धूमिल, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, अमृतलाल नागर और शांति सहाय नलिनी आदि प्रमुख हैं। इनके साहित्य में दलितों की समस्या चिंता का विषय बनी हैं और जीवन्तता के साथ इनके मान–सम्मान और समत्व की चिंताएँ लेखको के लेखन के स्तर पर दलित साहित्य से जोड़ती हैं। इसे सहानुभूति कह कर खारिज कर देने से काम नहीं चलेगा। इस स्थल पर विवाद की गुंजाइश हो सकती है, परन्तु इतना तो निश्चित है कि ये स्वानुभूति बेशक नहीं परन्तु समानानुभूति तो है ही।

नरेश मेहता, कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह, बलदेव प्रसाद मिश्र, शांति सहाय नलिनी आदि कवियों का ध्यान रामकथा के दलित पात्रों शबरी, शंबूक आदि की ओर अधिक गया है–

> ''त्रोता युग की व्यथामयी,
> यह कथा दीन नारी की,
> रामकथा से जुड़कर
> पावन हुई उसी शबरी की
> बदल गया सतयुग का
> सारा समाज त्रोता में
> वन अरण्य की ग्राम–सभ्यता
> नागर थी त्रोता में।।''[6]

शांति सहाय नलिनी की भी चिंता वही है जो दलितों की है। दलित की सबसे बड़ी चिंता सामाजिक मान मर्यादा की है ओर इसमें

सबसे बड़ी बाधा जाति और अस्पृश्यता है, जो समाप्त होनी चाहिए। शांति सहाय नलिनी ने राम के माध्यम से अस्पृश्यता की रूढ़ि को तोड़ा है–

''छूआ–छूत की रूढ़ि तोड़ दी।
प्रेम भक्ति के गुण गाए।
दीन हीन शबरी को तारा,
ऊँच नीच समतल लाए।।''[7]

कुँवर चन्द्र प्रकाश के शंबूक जिसे उच्च समाज ने पापी कहकर उनकी हत्या करा दी थी, न केवल कवि के लिए वरेण्य है अपितु परित्यक्ता जानकी एवं उनके पुत्रों के लिए प्रणम्य हैं–

''आंजनेय के परम सखा ये उनके ही अनुगामी,
भक्ति ज्ञान वैराग्य योग की इनकी अमर कहानी ।
इनको करो प्रणाम करो सादर इनके पदवन्दन,
अर्चनीय हैं युग–युग में ये स्वर्जयी तपोधन।।''[8]

यह सब आधुनिक दलित–चेतना एवं नारी चेतना के प्रभावों के चलते ही हैं, जिनकी काव्यात्मक अभिव्यंजनाएँ इन्हें दलित साहित्य से जोड़ती हैं–

''और उधर देखो कुलयुग के निकट समाधिस्त से
बैठे हैं शंबूक धरा पर तपधन बन जो बरसे।
निखिल स्वर्ग का वैभव प्रभु ने इनको किया समर्पित
रवि कुलगुरू ने इनको दी है किंजता संचित।।''9

दलित साहित्य अंधविश्वास, भाग्यवाद, पुनर्जन्म समता का साहित्य है, जिसकी परम्परा बौद्ध, नाथ–सिद्धों, संतो आदि से होती हुई यहाँ तक पहुँची है। ब्राह्मणवाद के इस पर थूकने या नाक–मौंह सिकोड़ने से इसका कुछ नहीं बिगड़ेगा। यह युग की माँग है। अब यह आँधी रोके नहीं रूकेगी।

संदर्भ

1. शिवराम वामन आप्टे, संस्कृत–हिन्दी कोश, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पृ. 58।
2. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, खण्ड–3, पृ. 35।
3. हिन्दी विश्व कोश, पृ. 245।
4. पारिभाषिक शब्दाबली, भाग–1, पृ. 284।
5. डॉ. एम. फ़िरोज़ खान, दलित विमर्श और हम, साहित्य संस्थान गाजियाबाद, प्रथम सं. 2010, पृ. 36।
6. नरेश मेहता, शबरी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ. 1।
7. शांति सहाय नलिनी, रामकथा, चैतन्य प्रकाशन, 17 अशोक मार्ग, लखनऊ, पृ. 68।
8. डॉ. कुँवर चन्द्र प्रकाश सिंह, संकट मोचन, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ. 234।
9. वही – शंबूक, तृतीय सर्ग, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ. 48।